

साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत ओड़िया काव्य संकलन

आह्निक

जगन्नाथ प्रसाद दास

अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोदन के दरबार का वह दृश्य, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ--रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं, इसे नीचे बैठा लिपिक लिपिबद्ध कर रहा है। भारत में लेखन-कला का सम्भवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख।

नागार्जुन कोण्डा, दूसरी सदी ई०
सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

साहित्य अकादेमी द्वारा पुरस्कृत ओड़िया कविता-संकलन

आह्निक

जगन्नाथ प्रसाद दास

हिन्दी अनुवाद
राजेन्द्र प्रसाद मिश्र



साहित्य अकादेमी

Ahnika : Hindi Translation by Rajendra Prasad Mishra of J. P. Das's Akademi award-winning collection of poems *Ahnika* in Oriya, New Delhi(1993),Rs. 40

प्रथम संस्करण : 1993

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय :
रवीन्द्र भवन, 35 फ़ीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

विक्री कार्यालय :
स्वाति, मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली 110 001

क्षेत्रीय कार्यालय :
जीवनतारा बिल्डिंग, चौथी मंज़िल
23, ए / 44 एक्स, डायमंड हार्बर मार्ग,
कलकत्ता 700 053

172, मुम्बई मराठी ग्रंथ संग्रहालय मार्ग,
दादर, बम्बई 400 014

गुना बिल्डिंग, दूसरी मंज़िल
304-305, अन्ना सलाई, तेनामपेट,
मद्रास 600 018

एडीए रंगमन्दिर,
109, जे. सी. मार्ग,
बंगलौर 560 002

ISBN 81-7201-530-5

मूल्य : 40. रुपये

मुद्रक : सविता प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

अनुक्रम

सम्राट

अंतिम बार अपने महल की
परिक्रमा कर लो सम्राट
इतिहास के इस मध्यांतर में
इससे पहले कि राह पर खड़ी
अशांत जनता का समय
तुम्हें ग्रस ले

याद कर लो अब
कब हुआ था अभिषेक
कितना लम्बा था तुम्हारा शासन
कितनी हत्याएँ और लूटपाट
कितने ख़ून-खराबे से होकर
राजतिलक से अपमृत्यु
सिंहासन और अंतःपुर की दूरी में

और क्या देखोगे यहाँ
तुम्हारा भण्डार तो ख़ाली है
अपना राजकोष खुद ही लूट लिया तुमने
तुम्हारा प्रमोद उद्यान
जलकर राख हो गया
उन्हीं कुँवारियों की उसाँसों से
अपनी नपुंसकता अप्रमाणित करने की कोशिश में
तुमने जिनका अपहरण किया था

पिंजरे में उसी प्रिय पक्षी का शव है
जो मरा था तुम्हारे ही हाथ के स्पर्श से

अपने अस्त्रागार के बर्छों को देखो
याद है ये सब जंगल के पेड़ थे
फ़र्श पर अस्त-व्यस्त पड़ी लाशें
ये हैं शहीदों की टूटी हड्डियाँ
देखो ताक पर हँसते करोटी को
यह तुम्हारा विदूषक था
आदेश दिया था
तुमने जिसके सिरच्छेद का

अब चले जाओ
अपने दरबार से अंतःपुर
बर्छों का जंगल पारकर
शहीदों का लहू बचाते
राजमुकुट और जयमालों की राख से होकर
पताका और रणभेरी के खँड़हरों में

राजज्योतिषी की गणना की त्रुटि से
तुम्हारे दिग्विजय की आशा
चूर-चूर हो गयी
तुम्हारे अश्वमेध का घोड़ा
ठोकर खाकर मर गया
अपने साम्राज्य के विवादग्रस्त सीमांत पर
तुम अवैध और जारजों की हत्याकर
सिंहासन पर आ बैठे थे
पर तुम्हारा वंशवृक्ष निश्चिह्न हो गया

क्योंकि तुम्हारा एकमात्र उत्तराधिकारी
जो तुम्हारे अंगरक्षक से जन्मा था
उसकी हत्या करवा दी थी तुम्हीं ने

तुम्हारे जूठन से पले जीवनीकार को
लकवा मार गया
तुम्हारे मंत्री और पार्षद तुम्हें छोड़
नव साम्राज्यवादियों के
उपनिवेश की तलाश में चले गये
तुम्हारे सैनिकों ने शरण ले ली
युद्धखोरों के अस्त्रागार में
तुम्हारी पटरानी तन बेच रही है
कोढ़ियों की बस्ती में

अब भला क्या लाभ
पीछे मुड़कर देखने से सम्राट
चले जाओ अब
इससे पहले कि तुम और तुम्हारा साम्राज्य
चलचित्र से बिसुर जायें
रानी महल के चोर दरवाज़े से
लौट जाओ इतिहास की अंधी गली में
जंग लगा मुकुट
द्वारपाल की भिक्षा-थाल में रखकर

महाभारत

छद्मवेश लिए आजीवन
नहीं रहा जाता अज्ञातवास में
लौटकर पुनः आना पड़ता है
अपनी-अपनी कर्मभूमि में

तटस्थ रहना सम्भव नहीं
क्योंकि यहाँ युद्ध अनिवार्य है
और सभी को
एक-न-एक पक्ष लेना ही है

यहाँ जीवन के महाकाव्य में
सब कुछ लिपिबद्ध है
साम्राज्य और क्षमता के लिए
चुनाव के पासे
भूमिहीनों के लिए भूमि-सुधार अधिनियम
सूई की नोक के समान मेदिनी
हरिजन बस्ती के लाक्षागृह
खेत और कारख़ानों के रणक्षेत्र
अभाव और दारिद्रय के व्यूह
विपक्ष के अचूक ब्रह्मास्त्र
और निम्न वर्गों की
विवस्त्र असहायता

कोई नैतिकता नहीं
कूटनीति के विचार-विमर्श में
माँग लेते हैं वृद्ध
यौवन का उत्तराधिकार
समर्पित हो जाता है मान-सम्मान
अनुचित प्रतिश्रुतियों को पूरा करने में
सभागार में होता है बलात्कार
अंधा हो जाता है साक्षी
विभाजित हो जाता है सतीत्व
यहाँ कामांधता सर्वस्वीकृत है
नारी मात्र एक गर्भाशय है
बलात्कार और अपहरण
दैनंदिन की घटनाएँ
तथा पराक्रम ही अधिकार है

प्रतिदिन के धर्मक्षेत्र में
साइरन की शंखध्वनि
युद्ध प्रारम्भ होने की सूचना देती है
सूर्यास्त उसका अंत नहीं
बल्कि युद्ध की तैयारी है दोबारा
इस युद्ध का कोई विधि-विधान नहीं
केवल पराजित होना ही अधर्म है

क्रांति आ रही है

गणकों ने ग्रह नक्षत्र देख
समय निर्धारित कर दिया है
और गुरुजनों का
आशीर्वाद भी मिल चुका है
क्रांति ज़रूर आयेगी

विधानसभा में
इससे सम्बन्धित प्रस्ताव
सर्वसम्मति से पारित हो चुका है
और अनुमति-पत्र
मिल चुका है
सरकारी समाचार-पत्रों में
विज्ञप्ति निकली है, देखो
क्रांति आ रही है
क्रांति आ रही है

न्यायाधीशों ने
अपनी .कलम की एक ही लकीर से
ग़रीबी को निर्वासित कर दिया
अध्यादेश के बल पर अब
देश का उत्पादन
तिगुना किया जायेगा
नदी नालों में

दूध और शहद की बाढ़ आयेगी
अंत्योदय की परिभाषा बदल
सभी लोग समान हो जायेंगे
क्रांति आयेगी ही आयेगी
क्रांति आयेगी ही आयेगी

अब और देर नहीं
देखो क्रांति आ रही है
कैसे अद्‌भुत आडम्बर
और चमक-दमक से
भिखारियों की भीड़ लाँघ
जाली वोटों की गड्डियों पर
चुनावी विजय के जलते जुलूसों में
क्रांति आ रही है
हरिजन वस्ती में आग लगाती
जुलूसों के खोखले नारों में
क्रांति आ रही है
बुद्धिजीवियों के सम्मेलनों के
बहुमत प्रस्ताव में
क्रांति आ रही है
काले धन की खनक में
स्वच्छन्द स्वप्न और रूमानी नशे में
क्रांति आ रही है
दलालों की नीलामी चीख़ों में
क्रांति आ रही है
किराये के अख़बारों की
पीली सुर्ख़ियों में

क्रांति के लिए जगह-जगह
तोरण और सजावट
शंख और पूजा की थाल थामे
पुरनारियाँ प्रतीक्षारत है
स्वप्नादेश के अनुसार
कार्ल मार्क्स के लिए
नया मंदिर बन चुका है
और पुजारी नियुक्त हो चुके हैं
अब फूल चंदन और
कपूर की माला लिये तैयार रहो
कोई नहीं रोक सकता क्रांति को
क्रांति आ रही है
क्रांति आ रही है

देवी आगमन

इस बार जब वह आयीं
किसी तिथि नक्षत्र का हिसाब न था
और न थी किसी शुभ घड़ी की गणना

साज-सजावट की प्रतीक्षा न कर
पत्र पुष्प पूजा-मण्डप और पीठिका
चमकीले काग़ज़ और निऑन रोशनी बिना
घंटियों की ध्वनि की परवाह न कर
वह आयी बिन तैयारी के

चण्ड मुण्ड शुम्भ और निशुम्भ निश्चिह्न
चण्डी और चामुण्डा को लिए
रक्तवीर्य को वश में करके
बवण्डर ने राह दिखा दी
निश्चित प्रलय की ओर
सिंह दौड़ चला निर्विरोध
दो सौ किलोमीटर की गति से
महाकाल के काले बादलों से
वह उतरी प्रिय भूमि पर
हाथ में खड्ग और करोटी
नरमुण्ड की माला
मांस-पिण्ड और रक्तपात्र
बाहर निकली जिह्वा त्रिशूल और नाग

वज्र मूसल, अंकुश और फाँस
आँखों में संहार, साँसों में विध्वंस
विनाश की एकमात्र इच्छा लिये

उड़ गये भूगोल के परखचे
छिन्न-भिन्न हो गया मानचित्र
जल स्थल एकाकार
नयी-नयी नदियाँ नाले उपत्यका
भू-भाग और दलदल
स्थिति और सत्ता सब समा गये
चक्रवात की अंधी आँखों में

खुद को स्थापित किया उन्होंने
आदिगंत फैली जलराशि में
हाहाकार के स्तव
उसाँस भरती आरती की घंटियों
और आर्त्तनाद के अघोरी मंत्रों में

भुवनेश्वर

कोई आवेग नहीं
कोई उद्वेग नहीं
इतिहास के पिछवाड़े से
आता है सूर्य
पूर्णतः उत्तेजनारहित
हवाई अड्डे के उस पार
सियार भूँकते हैं
राजधानी की सुबह होती है
साइकिल की घण्टी और
मछली-दुकान की भीड़ में
दफ़्तर के फाटक खुल जाते हैं
मंदिर की घण्टियों और आरती से

कंक्रीट का राजपथ अलगा देता है
नये और पुराने का सम्बन्ध
टेलीफ़ोन का तार काट देता है
यक्ष और शालभंजिका की वातचीत
निऑन की रोशनी मिटा देती है
पत्थर का अंधकाराछन्न आश्चर्य
अख़बार की सुर्ख़ियाँ
अर्थहीन कर देती है
किंवदंती का करुणतम रहस्य

पहली तारीख़ के पूर्व
उद्यापित हो जाते हैं शीघ्र ही
राजाओं की वंशावली से
जुड़ जाता है मंत्रिमण्डल का विवरण
कलिंग युद्ध के समतल मैदान में
उतर आते हैं
दल बदल कर सैनिक
निर्णय की अनजान तिथियों में
योद्धागण आश्रय लेते हैं
संग्रहालय के कूड़ेदानों में

सिनेमा के पोस्टर तले
गाय बैठी जुगाली करती है
पान की दुकान के आगे
देश के भविष्य खड़े
शिल्पनगरी की ओर ताकते हैं
अशोक और खारबेल
अब याद नहीं आते
रोज़गार कार्यालय की भीड़ पारकर
गाड़ी जा रुकती है
होटल के मुख्य द्वार पर
रिक्शों के पहिये नाप लेते हैं
सामाजिक चेतना के आरोह-अवरोह
भिखारी निकल आते हैं
ऐतिहासिक गुफाओं से
पुरातात्त्विक ध्वंस स्तूप पर
बैंक का नक्शा बनता है
विदेशी पर्यटक के कैमरे में

सिमट जाते हैं
अशोकाष्टमी और शिवरात्रि के
अर्थ और आशय

फ़ाइल पर धूल जमती रहती है
मंदिर के शिखर
अकारण ही ऊपर ताकते रहते हैं
शाम का हवाई जहाज़ गुज़र जाता है
दीवार पर लिखे नारों में
विद्रोह होता रहता है
सिर लटकाये चले जाते हैं चुपचाप
दफ़्तर से लौटते थके-हारे लोग

ख़ाली घर

मैं फिर से लौट आया
अपने आत्मदण्ड की प्रयोगशाला में
अपने समस्त आचरणों का
एकांत में विश्लेषण करने
मैं ऐसी निर्जनता चाहता था जिसमें कहीं कोई न हो
सारा कुछ ख़ामोश
दो जनों की चुप्पी से
ठण्डी हुई चाय की प्याली-सा

पर ऐसा एकांत ही कहाँ
अभिशप्त नाविक के लिए
समुद्री यात्रा का अंत नहीं
एक कमरे से
दूसरे कमरे तक
कहीं आश्रय का द्वीप नहीं
आकाश में जबकि अँधेरा है
और तारे अस्त हो चुके हैं
अनेक सम्भावनाओं की ऊष्मा है
परित्यक्त विस्तर पर

छूते ही
सब अदृश्य हो गये
आँखों के सामने से ओझल हो गये

दूर निश्चिह्न आलोकमाला-सी
बिंदु में निहित समानांतर रेखा
क्षितिज में छिपे उपनगर-सा
पर दूर जाते समय
सारे दृश्य पीछे पलटकर
फिर बता देते हैं देखती आँखों को
तड़पते समाधान
अँगुली दिखाते हैं
प्रश्नों की ओर

यहाँ कोई ख़ाली जगह नहीं
सम्भावना से रहित कुछ भी नहीं
कमरे में रेगिस्तान
छत पर बुन जाता है
मकड़ी का जाला
बंजर बन जाता है
खिड़की से बाहर का मैदान
घर ढह रहा है ध्वंस स्तूप बन
ख़ाली कुर्सी पर लेट जाता है
मेरी देह का अस्थि और कंकाल
अभाव भर जाते हैं
इच्छाओं के गहनतम अंतराल
यहाँ घर भरा है
तुम्हारे लौटने के आश्वासनों से
दीवारों पर सजी हैं
तुम्हारी प्रतिश्रुतियों की
नश्वरता

मेरी इच्छाशक्ति में सम्मिलित है
तुम्हें लौटा लाने की लाचारी
यहाँ स्वयं सम्पूर्ण है रिक्तता
और मेरे एकाकीपन को
कोलाहलपूर्ण रखती है
मेरे बार-बार लौट आने की
अर्थहीन बाध्यता

सीढ़ियाँ

इस ज़रा-सी दूरी के बीच
नहीं है किसी यात्रा का
शुभारम्भ या पहुँच
केवल लक्ष्यस्थल की किंवदंतियों में
क्षय होती पथरीली चट्टान
और एक के बाद एक डग है
जो सूचित कर जाता है
गमन से आगमन
प्रस्थान से महाप्रस्थान तक
जठर से स्वर्गद्वार और
पावदान की उच्छृंखलता से
चरम बिंदु के संयम तक

आविष्कारक के उसाँसों में
पीली पड़ जाती है
मानचित्र की आस्तिकता
विश्वास की भूल-भुलैया में भटक जाता है
कृतसंकल्प तीर्थयात्री
पश्चात्ताप धूमिल कर देता है
पहुँचने का उत्साह
भला यह कैसा स्वर्ग है
जहाँ कोई परिवर्तन नहीं
ऋतु हमेशा वसंत

और पेड़ की बोझिल डालों से
फल तक नहीं गिरता

सीढ़ियाँ गिनने से क्या लाभ
वे बाईस हों या बत्तीस
वे स्वर्ग के लिए हों या नागलोक के लिए
सतह का अंतिम पत्थर
चलने का हो या पहुँचने का
अँधेरी कोठरी हो या खुली छत
रास्ता गया हो
अंधे कुएँ या ध्रुवतारे तक
जीवन की स्थविरता
या कुवाँरी मृत्यु तक

ऊपर से नीचे, नीचे से ऊपर
यात्रा की क्षय वृद्धि होती रहती है
सूर्यों को ताकते रातें कटती हैं
डग आगे बढ़ते चलते हैं
आवाजाही में नहीं कटतीं
बहुविध यात्रा की पुनरावृत्तियाँ
इधर-उधर के सारे पदचिह्न
देख लेते हैं सोपान
जो बराबर नहीं
समतल नहीं
जो ऊँचे-नीचे हैं
और हैं
दोनों ओर न पहुँच पाने की अतल
प्रस्तरीभूत आकांक्षाएँ
और अप्राप्ति के अनंत वृत्त

पुरी

यहाँ सब कुछ
आश्रित है किंवदंती पर
रेत में दब जाते हैं
त्रेता और द्वापर
जीर्ण होते रहते हैं
मादलापांजि* के पृष्ठ
इतिवृत्त के सभी पात्र
काले सफ़ेद घोड़ों पर सवार हो
निकल पड़ते हैं अनुश्रुतियों की ओर

सीढ़ियाँ सारी अगले युग की
चिंता की साँस से रुँधती हैं
गली की संकीर्णता से
दीवार के चित्रों में वसंत उतर आता है
धूप से पिघल जाते हैं
भजनों के भग्नावशेष
जलती रेत में चमकते हैं
भिखारी के सारे नक़ली सिक्के

रथ के पहियों से छिन्न-भिन्न हो जाती है
लोकारण्य की निर्जनता

---

*पीढ़ी-दर-पीढ़ी सुरक्षित पंजिका

सब एकाकार हो जाते हैं
दर्शक दृश्य और दर्शन
संस्कार का अदृश्य हाथ
निष्ठा की काली पट्टी बाँध देता है
औचित्य और तार्किकता की आँखों में
मूर्तियों पर
धूल बन जमता रहता है
आरती का जीवंत स्वर
अंधा आकर खड़ा हो जाता है
अरुण स्तम्भ की छाया तले

चमगादड़ मँडराता है
भोग-मण्डप के ऊपर
भक्त राह भटककर चला जाता है
अंदर अहाते में
मूर्तियाँ ताकती रहती हैं अँधेरे में
और एक युग बीत जाता है
समय बीतता चला जाता है
पिछले और अगले जन्म की चिंता में
रूप और अरूप के द्वंद्व का
आपसी समझौता हो जाता है
मुक्ति मण्डप के अँधेरे मंच पर
यहाँ एक निजस्व पूर्णता है
कबंध का प्रस्तरीभूत लास्य
और दो वर्तुल आँखों के
स्वयंसम्पूर्ण काया में
मुख्य मार्ग पर से छाया खिसक जाती है–
स्वर्गद्वार* की ओर

*स्वर्गद्वार पुरी का श्मशान घाट

अँधेरा आकर उतरता है
झाँव वृक्ष के गहरे आर्त्तनाद में
दारु* बहता रहता है प्रलय-पयोधि में
लहरों के मृदु थपेड़ों से
समुद्र सुना जाता है
साँझ के अविचलित समुद्र-तट को
अंतिम सत्य के सारे सिद्धांत

*जिस काष्ठ-खण्ड से प्रभु जगन्नाथ की मूर्ति बनायी जाती है।

कर्फ़्यू

मकान दो क़तारों में सजे हैं
क़ब्रिस्तान के मक़बरों के पत्थरों की तरह
सावधान हैं बत्तियों के खम्भे
सैनिकों की तरह हाथों में संगीन लिये
निषेधाज्ञा सुना जाता है सायरन
बूटों की चाप सुनायी पड़ती है
सुनसान शहर के सीने पर

खिड़की और दरवाज़े सब बंद हैं
और हवा है बेहद गुमसुम
रंग मुरझा जाते हैं आकाश के सीमांत पर
आतंक के सनसनी मध्याह्न में
दोपहर को ढके रखती है
आतंक की दबी-दबी आवाज़

घटनाविहीन दिन चढ़ता जाता है
अख़बार के ख़ाली पृष्ठों पर
सड़क का ख़ून सूख जाता है
बारूद की बू मिट जाती है हवा से
चील चक्कर काटती रहती है
आकाश की सुरक्षित दूरी से
गलियों की श्मशान-भूमि पर
कूड़े की राख और अस्थि-पिंजर

आवारा कुत्तों के झुण्ड
घेर लेते हैं शहर को

शहर की मृत उपत्यका पर
सूरज उतर आता है रक्ताक्त डग भरते
रुद्ध चीत्कार प्रतिध्वनि बन
लौट आती है नियंत्रण-कक्ष में
उसाँसों का विवश विरोध
आकाश में छितरा जाता है
बूँद-बूँद तारों की निष्फलता बन
चाँदनी के विरोध को पोंछता
गुज़र जाता है टैंक
राजपथ से होकर

नवगुंजर*

जो सभी रूपों से परे है
उसकी देह में लगा देता है चित्रकार
किसी का मुँह किसी की देह
और कैसे-कैसे अशरीरी रहस्य
कूची से निकलकर
नीचे आ खड़े होते हैं
किसी का भावनातीत भ्रम
अरण्य आलेख बन

परीक्षाओं का अंत नहीं
ध्यान से निकल पहचानना पड़ता है
कपटी वेष के अंतराल से
आगंतुक की यथार्थ वास्तविकता
क्रमिक परीक्षाओं की सफलताओं में
परिहार करना पड़ता है
एक दूसरे अज्ञातवास का दण्ड
सव्यसाची देखता रहता है
प्रायश्चित्त की संयत साधना में
शापमुक्ति का अंतिम चरण

***नवगुंजर** : सारलादास कृत ओड़िया महाभारत में श्रीकृष्ण नवगुंजर का रूप धारण कर अर्जुन के सामने आते हैं। यह एक ऐसा विचित्र जानवर है जिसका सिर मुर्गे का, गर्दन मोर की, कंधा साँड़ का , पूँछ साँप की, कमर सिंह की, चार पैरों में से एक बाघ का, एक घोड़े का, एक हाथी का और चौथा पैर नहीं बल्कि एक औरत का हाथ है, जिसमें कमल है।

निर्वासन के दिनों में
छद्मवेश अनाविष्कृत रहता है
किंतु साधक अब अनायास ही पहचान लेता है
वहशी बाहरी आवरण तले से
विराट रूप का घटांतर
स्वीकार कर लेता है
विलक्षण कायाकल्प
तीर-धनुष उतारकर रख देता है नीचे
नतमस्तक हो स्वागत करता है
बहुरुपिये की दैवीय विचित्रता को

परिचय की उपलब्धि में
टूट जाता है सामूहिक रूप का रहस्य
अंग-प्रत्यंग अस्त-व्यस्त होते रहते हैं
हिंस्रता के निष्फल आक्रोश से
एकमात्र बढ़ा हुआ हाथ
पशुत्व को विवश कर देता है
सारा कुछ शांत और समन्वित हो जाता है
कमल की कोमल करुणा में

कटक*

सभी कुछ याद आते हैं यहाँ पर
सभी कुछ
नोट बुक में प्रेम कविता
लिख रहे अँगड़ाई भरे दिन
भर जेब वासंती हवा
और आकाश को ताकते हुए
कहीं खो जानेवाले पल
हल्की धूप मुट्ठी में ले
दूसरों को सौंप देने के दिन

लगते हैं पहचाने-पहचाने से
बरसों पुराने चेहरे
जो लोग रुक गये
चित्रित दिनों के सम्मोहन में
नदी किनारे बेंच पर बैठे
इंद्रधनुष देखते-देखते
जो पीछे रह गये
बालिमेला की भीड़ में
रंगीन रूमाल उड़ाते
आँखों में भर आँख आँसू लिये
सिनेमा हॉल से बाहर निकलती
उदास घड़ियों में

---

*कटक में महानदी किनारे रेत पर लगनेवाला सुप्रसिद्ध मेला।

आज यहाँ आगे जाते समय
रिक्शे से उड़ रहे पल्लू में
बँधे रह जाते हैं
पीछे छोड़ आये
रंग-बिरंगे अनुभव सारे
रास्ता रोक लेता है
लेवल क्रासिंग का फाटक
यान-वाहनों की भीड़ में
गति रुद्ध हो जाती है चेतना की
आँखें टिक जाती हैं
बदलते रास्ते के दोनों ओर
मन स्वीकार लेता है चुपचाप
उम्र की विवशता

सभी कुछ परिचित-से लगते हैं
नदी की बाँध लाँघ कैसे
खिड़की से सूर्य-किरण आती है
आहिस्ता-आहिस्ता डग भरते
भिखारी सड़क किनारे बैठा होता है
आकाश में बादल के
चीथड़ों को ताकता
कटी पतंग आकर उतरती है
टूटी छत पर
भगवान पर चढ़ा जल वह आता है
मिल जाता है नाली के बहाव में

खोमचों और दूकानों की भीड़ में
न्याय का सौदा हो जाता है

बारिश में धुल जाता है चण्डी मंदिर का पूजा-पाठ
कॉलेज-चौक की चाय दूकान में
बंद हो जाती है सहसा बातचीत
अख़बारवाले की आवाज़ मिटा
प्रलय का आतंक आता है
काठजोड़ी नदी का तट लाँघ

अस्पताल की सड़क छोड़
बाहर जाते समय
चौक पर ठिठक जाते हैं पग
यहाँ से सारे रास्ते जाते हैं
विस्मृति की ओर
बाहर जानेवाला
फिर मुड़कर नहीं देखता
महानदी से थोड़ा जल
अंजलि में लेकर पूर्वजों को
समर्पित कर देता है

गरमी के दिन जाने कब मिल जाते हैं
बिन मौसम बरसात की आर्द्र अंतरंगता में
बिजली के खम्भे की आयु बढ़ती जाती है
बिसूरती यादें
इसी तरह लुकाछिपी खेलती हैं
गलियों की भूलभुलैयों में
दो नदियों के आलिंगन में
निर्विकार ऊँघता रहता है शहर
एक जैसा बना रहता है संसार
बदल जाता है इतिहास

नर्तकी

रंगमंच के अँधेरे में
एक भिन्न विश्व ब्रह्मांड
एक अशांत नक्षत्र-सा है
उसे आकर वश में कर लेता है
उसका अलौकिक आविर्भाव
सौरमण्डल स्तब्ध है
प्रकाश के आग्नेय वलय के बीच
वह फूट पड़ता है
चेहरे पर बार-बार विस्फोटित
उल्का का उल्लास लिये

उसकी हर मुद्रा और कटाक्ष में
अलग-अलग मंत्र हैं
बदन के सांकेतिक तत्त्वों में
देश-देशांतर के लिए व्यक्तिगत सदेश
अँगुली संकेत करती है
एक अनाविष्कृत अंतरिक्ष की ओर
पदचिह्नों की रेखागणित में
निर्धारित हो जाता है
दिशाओं का संतुलन
आँखों की जिज्ञासा ले जाती है
अनुपलब्ध दिगंत के दूसरी ओर

कोई प्रतिबंध नहीं
संगीत की ऊर्ध्वगामी अनंत व्याप्ति में
नये-नये नभमण्डल खुल जाते हैं
घुँघरुओं की अर्थगर्भित ध्वनि में
पदपात क्रमशः विवर्धित हो
सूचित कर देता है
जीवन के वृहत्तर निमित्तों को

मंच भर जाता है
कालातीत अंतरंगता से
प्रेक्षागृह का आनंद मिल जाता है
आकाश के आह्लाद में
चेतना की दीप्त एवं निर्धारित घड़ियों में
वह लौट जाती है नेपथ्य में
अंतरिक्ष के आश्चर्य में
एक क्षणिक शून्य स्थान छोड़

मृत्युबोध

मरने से पहले क्या याद आते हैं
घर-बार, प्रिय-परिजन, सुख-दुःख
बचपन की हैरानी भरी मिली-जुली सुबह
दुस्साहस के क्रमशः संकुचित अग्निवलय में
खेलता निश्चिन्त मध्याह्न
भय और दुःख के कुहासे में
सोयी दुःखभरी रात
या नदी की पर्याप्त धारा में प्रवाहित
विवर्ण समय आरम्भ और अन्तहीन

क्या सोचता है मरनेवाला
पुरानी स्थिति में डूबते-उतराते
चाँद को छूने की अद्भुत अनुभूति
आँधी की रफ्तार में मिली
भविष्य की विमर्श आयु
पृथ्वी के अनाविष्कृत महादेश की बात
इतिहास के अधूरे वायदे
कल्पनामण्डित नन्दनवन
बार-बार उच्चरित गोपनीय मंत्र

किसका चेहरा दिखता है मरते समय
परी-कथा के प्रथम राक्षस
देव-देवी किन्नरी गंधर्व

पोशाक मुखौटा छद्मवेश की ओट में
हास्य-रुदन क्षोभ-ग्लानि विश्वास घृणा संदेह
बादलों में दीवारों पर झीलों में
बदलते जाते चेहरे
परिचित-अपरिचित कुछ-कुछ परिचित
परिचय अपरिचय के बीच डोलते चेहरे

या फिर कुछ भी नहीं हैं
बादल–बादल नहीं, आकाश–आकाश नहीं
सुबह और साँझ सब झूठे हैं
सब केवल एक मोहमाया शून्य है
स्मृतिहीन और भावनारहित स्थिति
सादृश्य नहीं समय नहीं
सब कुछ दृश्यों से परे
अलग-अलग है सब कुछ अपने अंदर
कुछ नहीं दिखता
कुछ याद नहीं आता
सिवा चौंध पैदा करती
एक रोशनी के
जो बनी है
अनेक अँधेरों के उपादानों से

काली

ऊपर उठा पैर
महाकाल की ओर
आँखों का आग्नेय लक्ष्य है
सर्वनाश के सीमांत पर
उठे हाथ की क्रुद्ध कटारी से
कट जाते हैं भविष्य के सारे आश्रय
बर्छे की निम्नमुखी तीव्रता से
छिन्न-भिन्न हो जाते हैं
अंकिंचन भक्ति के शेष आधार
नरमुण्डों की माला में रौरव की विभीषिका
अड़हुल में लहूलुहान संत्रास
जड़ जाता है उद्धारहीन अभिशप्त खड्ग
नागफनी के काँटों फँसी
बिंधी रह जाती है शांति और मंगल कामनाएँ

उनके आगमन के रास्ते के
सभी नदी नाले सूख गये
दिशा-दिशाओं में फैल चुके अकाल और महामारी
गलित आकाश के परित्यक्त कोणों में
रंग सारे नष्ट-भ्रष्ट हो चुके
वन की आग में पशु-पक्षी जल गये
हँसी को पीड़ित कर गयी

निर्दयी दुपहरी
परछाइयों के उत्ताल में
छिप गया तड़पता सूर्य
खड्ग और खप्पर का आक्रोश
बुझा गया आतंक के दिन
आवाहन के निर्मम मंत्रों से
खो गई अभिशप्तों की अर्चना

हाथ ऊपर और ऊपर उठा पैर
जीभ के हिंस्र आक्रोश में सर्वभूक् क्षुधा है
खोपड़ी की शून्यभेदी कोप दृष्टि
जला डालती है करुणा के कण
आशीर्वाद खो जाता है अभिशाप की चपेट में
अमावस छा जाती है आह्निक पर
चाँद बुझ जाता है अपने ही अँधेरे में

अब कालरात्रि का राज है
रक्त में बह रहे हैं अड़हुल के फूल
नागफनी में अटके हुए हैं आर्त्तनाद
भक्तगण त्राहि त्राहि चिल्ला रहे हैं
पशु चले जाते हैं आज्ञा मान
अपने अपने निर्दिष्ट यूप की ओर

इतिहास

अब और कोई गवाह नहीं बचा
सारे कृतित्व क़ैद हैं महलों और गुफाओं में
सफलता के सारे सबूत लिपिबद्ध हैं
कीर्तिस्तम्भ और कामशास्त्र में
अमरत्व की चाह अंशीभूत हो चुकी है
प्रशस्ति और अभिलेखों में

यहाँ कोई चेतावनी नहीं
न ही है काई नीतिशिक्षा
आकस्मिकता यहाँ सर्वसम्मत है
तर्क-संगति और स्पष्टीकरण की कमी नहीं
सबके लिए यहाँ ख़ाली है जगह
अज्ञात अध्यायों की अतल गहराइयों में

सभी पंडितों के सफल हाथों से
सारे अनुच्छेद संशोधित हो जाते हैं
महात्मा और महारथी
सुर्ख़ियों से उतर आते हैं
पाद-टिप्पणियों और परिशिष्टों में
घटना-चक्र का अदभुत षड्‌यंत्र
समय के कूड़ेदान से
बिसरी दुरात्मा को निकालकर
फेंक देता है सिंहासन पर

शर्त, संधि-पत्र या समझौते का दस्तावेज़
अंधी गली, गुप्त दरवाज़ा, मंत्रणा कक्ष
अपने तीर-कमान और परमाणु में
होते हैं देश-काल-पात्र
अश्वमेध और आणविक यज्ञों में
सत्ता की सीमा तय हो जाती है
उत्तेजना की फिरती छाया तले
सभ्यता की आयु बढ़ती जाती है

बाहर खड़े लोग
ऊब से ताकते हैं
सार्थक घटनाक्रमों की ओर
समर्थ लोगों के हाथों
लिखे जाते हैं नित नये अध्याय
फिर सब कुछ समर्पित हो जाता है
समय के सर्वभूक् कीटों के आगे

अनुकृतियाँ दावा करती हैं मौलिकता का
विदूषक गम्भीर हो
अपने परिहास को दार्शनिक बनाते हैं
सब समा जाता है जीर्ण पृष्ठों में
भविष्य के गवेषक बैठे रहते हैं
अनिर्णीत वर्णमाला हाथों में लिये
सारे घटित दुःखांत वृत्तांत
पुनः संघटित होते हैं प्रहसन बन

गाँधी

सत्य की जाँच-पड़ताल
बन गये नारे
जीवन-दर्शन चिपक गया
प्रतिभा की अंधी आँखों में
कृतित्व परिभाषा में सिमटकर रह गया
आत्मा पर अधिकार जमा लिया
सुविधावाद के पण्यों ने

धर्म की स्थापना के लिए
युद्ध घोषित हुआ
शांति बनाये रखने के लिए
जलायी गई
दलितों की बस्ती
सत्य के सबूत ढूँढ़े गये
कपट शास्त्र की दुहाई देकर
ईश्वर के बंदों को
बहिष्कृत किया गया
सबसे अंतिम व्यक्ति हट गया
और भी पीछे

और कोई सत्यान्वेषी नहीं
किसी को चिन्ता नहीं साधन की
सबकी आँखें टिकी हैं

खोटे परिणाम पर
हानि-लाभ के चोर बाजार में
चुक गयी सच्चरित्रता की शेष पूँजी
साम्राज्यवादी चले गए
नये उपनिवेश की तलाश में
युद्धख़ोरों के हाथों में
समर्पित हो गया
शांति का पुरस्कार

पुरानी घड़ी नहीं लाँघ सकती
दरिद्रता की सीमा रेखा
मोटे चश्मे के काँच से
अब नहीं दीखती
चित्रित सत्य की विभीषिका
एक चीथड़ा नहीं ढक सकता
अखण्ड क्षमता की अश्लीलता
छड़ी से नहीं रोकी जा सकती
आतंकवादियों की उग्र हिंस्रता

घड़ियाँ मौन और अचल हैं
इतिहास ले लेता है अवकाश
पत्थर की मूर्ति परिभाषा की श्रृंखला
चलचित्र और जयंती समारोह से निकल
वह लौट जाता है
तेज डग भरता
नये-नये हत्यारों के
उठे हुए बंदूकों की ओर

गीतगोविंद

यह एक ऐसा कुंजवन है
जिसकी परिकल्पना
स्तम्भन आकर्षण और वशीकरण में है
जिसकी चौहद्दी है आवेश
और इंद्रियाँ जिसका आशय
यहाँ प्रवेश करते ही
भर जाता है इच्छाओं से आकाश
अंधेरा और घना हो जाता है मनोरथ-सा
जीवन समर्पित हो जाता है
किसी के उदार पद पल्लव से

यहाँ सब कुछ देहमय है
रात्रि का उनींदा पहर बीत जाता है
जंघा स्तन अधर से होकर
पल्लव और किसलय शय्या पर
सुबह आकर उतरती है
अस्त-व्यस्त पलकें कबरी और चूर्ण कुंतल में
उसके बाद अभिमान और क्षोभ
प्रलाप संताप ग्लानि और उसाँस
अभागिन सखी संदेश लिये जाती है
मुग्ध से स्निग्ध, चतुर से सानंद
खंडिता से कलहांतरिता तक
कंदर्प का तीर तलाश लेता है

माधवी नवमालिका और अशोक वृक्ष के बीच
विरह से जुड़े दो अधीर देह

अँधेरा लौटता है अंतर्दाह-सा
कस्तूरी कुंकुम चंदन और अंजन चुपड़
उत्तरीय उड़ाता और मेखला नचाता
कुण्डल और नूपुर के धीमे स्वरों में
निरंकुश मन टिका रह जाता है
चंचल चकित विह्वल और व्याकुल
लवंग पलाश तमाल और बकुल के बीच
जड़ित रह जाता है अपना तन
रोमांच सिहरन और मूर्च्छा से

अंत में सब कुछ हो जाता है
अवसन्न खिन्न स्वेदसिक्त और अस्त-व्यस्त
सूर्य समन्वित कर लेता है
इंद्रिय और मन जन्म-जन्मांतर
स्तन पर पत्रावली आँक देता है सवेरा
देह में सजा देता है वलय कंगन नूपुर
अब यहाँ अंग नहीं, अनंग नहीं
पूर्वराग नहीं, प्रेम नहीं, विरह नहीं
है सिर्फ़ एक बदलता अनुभव
और कविता का राज
शब्द और छंदों का समारोह
राग और ताल का आधिपत्य

कुंजवन के संगीतमय साम्राज्य में
अपनी प्रेरणा का चक्रवर्त्ती होता है कवि
मन यमुना में ला देती है बाढ़
कोमल कांत पदावली

भय

भय है प्रागैतिहासिक अंधकार
शहर के गली-कूचे में छुपा रहता है
जब ब्रीफ़केस में पचार हज़ार रुपये होते हैं

भय है किंगकांग की औलाद
शैशव की परी-कथा से निकलकर
ताल ठोंकता है कंक्रीट जंगल की छत पर

भय है टेलीफ़ोन की घण्टी
कलेजे में हथौड़ी ठकठकाते आता है
बेवक़्त हाकिम की आवाज़ बन

भय है आधीरात का टेलीग्राम
बंद लिफ़ाफ़े में आ पहुँचता है
जब प्रियजन हों परदेश

भय है सुनसान दुपहरी में
भारी बूटों की श्रृंखलाबद्ध आवाज़
कर्फ़्यू के समय नपुंसकों की गलियों में

भय है आपातकाल की कानाफूसी
खाक़ी पहन बायोनेट लिए दौड़ जाता है
तितर-बितर होते जुलूस की ओर
विरोधी नारों के बंद होने पर

भय है मोटर साइकिल की गर्जन
मुखौटा पहन निकलता है मंदिर से बाहर
मृत्यु-सूची में नाम लिखा होने पर

भय है अपने कलंकित अतीत का गवाह
अप्रत्याशित लौट आता है मन के कालापानी से
पुरानी पापों का प्रायश्चित्त ढूँढ़

भय है मृत्यु की सहसा आशंका
आईने से निकलता है समय का शून्य बन
बुढ़ापे के शिकन भरे चेहरे पर उभार
प्रसाधन के आसक्त क्षणों में

भय है सम्बन्धों की सूक्ष्मता
मनमुटाव के रोज़मर्रे में लटका रहता है
टूटने की चिरंतन आशंका लिये

आह्निक

दिन इसी तरह आता है
और चला जाता है
शहर की गलियों में
दिन-दर-दिन महीने-दर-महीने
एक ऋतु से दूसरी ऋतु
सामूहिक रिक्तताओं से होता हुआ

ग़लती से जल रही वत्ती को निस्तेज कर
सुबह का सूर्य उगता है
चूल्हे के कोयले के धुएँ में
अख़बार की लहूलुहान सुर्ख़ियों के पीछे से
चाय के प्याले पर चमक लाता

रास्ता किनारे नल पर भीड़ जमाती
सुवह सुन पड़ती है नौ बजे के सायरन में
कारख़ाने में मशीन की आवाज़ बन
सुबह चढ़ जाती है
दफ़्तर के समय की भरी बस में

सुबह पसर जाती है
राशन की दुकान के आगे
पोस्टर पर रंग पोतकर

दोपहर परछाइयों को रोकता है
चौराहे पर ट्रैफ़िक पुलिस बन
हताशा को छिपा देता है
काले चश्मे की कृत्रिमता में

दुपहरी फिसलती जाती है
रिक्शेवाले की पीठ का पसीना बन
दुपहरी उड़ती जाती है
रास्ते के सूखे पत्तों में
दुपहरी पिघलती जाती है
सड़क के तारकोल में
दुपहरी लौट आती है
सुनसान गली का सन्नाटा बन

टिफिन के डिब्बों में भरकर अपराह्न
दफ़्तर और कारख़ाने के लोग लौटते हैं
साँझ उतरती है पान की दूक़ान के सामने
सिनेमा हॉल में लड़की इंतज़ार करती है
दिन की रोशनी बुझ जाती है
बस्ती की घुली-मिली उसाँसों में

बत्ती के खम्भे पुनर्जन्म लेते हैं
दिन चला जाता है खिन्न और उचाट-सा
अँधेरे में चुपचाप
रात की पहली ट्रेन से
.

खँड़हर

किले की ढहती दीवार से
कैसी बातचीत की जा सकती है
किस मृत भाषा के सहारे
किस तटस्थ दुभाषिये की मदद से
किले की दब चुकी खाई से
क्या सफ़ाई माँगी जाये
किस कूटनीति के कैसे कपट से
समर्थन ढूँढ़ोगे कहाँ
आपस में टकराते वर्ग-संघर्ष के
कैसे पत्थरों और संगमरमर में

कई सदी पहले कौन था यहाँ
नया सिक्का संवत् और सिद्धान्त चलाकर
कौन आया था हाथी घोड़ा और टैंक पर सवार
ज़ंजीर से बँधे गुलामों की पलटन लिये
किसने अपनी क्षमता साबित की
फाँसी के खम्भे की निर्मम निपुणता से
फिर कौन चला गया चोर दरवाज़े से
ज़नाना लिबास पहने
आधीरात के हत्यारे से बचकर

गिरती ईंटों में कोई पराक्रम नहीं
पत्थर से अँकुरते पौधे सारे

हैं सम्भावनारहित
और किसी काम नहीं आयेंगे
टूटी छत पर जंग लगी तोप
मिटते अक्षरों में लिखी ताम्रपट की प्रशस्तियाँ
बिन दरवाज़े के कारागार की टूटी साँकलें
स्वेच्छाचार सिद्ध करती
काई लगी शिलालिपि

चील उड़ जायेगी
ज़नानख़ाने की अतृप्त उसाँसों में
घोड़े के टाप खो जायेंगे
सियार के धीमे स्वर में
दीवार झुक जायेगी
समय के जुलूस का स्वागत कर
पत्थर फट पड़ेगा
दरबारी अन्याय के विरोध में

और कोई लिपिबद्ध नहीं करेगाा
माटी तले दबा स्वर्णयुग
झाड़ियों में छिपा विश्वासघात
घास से ढका विजय-समारोह
पत्थरों की दरार में रुकी युद्ध-घोषणा
मकड़ी के जाले से लटकी वंशावली

टूक टूक वृत्तांतों पर पग धरे
पिकनिक मनाने आया आदमी झाँकेगा
टूटे दरवाज़े से क़िले के भीतर
अतीत से कुछ उपदेश तलाशता
उदास और खिन्न दुपहरी
बारम्बार प्रतिध्वनि कर रही होगी
नींद फिर भी किम्वदंती की नहीं टूटेगी

अगली कविता

मेरी अगली कविता आयेगी
एक, क्षमाशील सहानुभूतियों से
दो, प्रेम और तीन, विच्छेदों के बाद
उसाँसों के अनुतप्त आकाश से उतरेगी
पूर्वराग का स्वस्तिपाठ बन

मुरझाये सम्बन्धों के पश्चात्तापों में
वह आयेगी आत्मीयता का हाथ बढ़ाये
बदले पारस्परिकता को सँवारकर
संशय और अविश्वास के श्मशान पर
समझौते के संवेदनशील फूल खिलाती

बाँझ आकाश की खिन्न दुपरियों में
वह आयेगी हरित स्मृति का स्मारक बन
मन के गोपनीय एकांत में
गहन मूर्च्छनाओं को साकार कर
भूलते संगीत की प्रतिध्वनियाँ जगाती

वह आयेगी अभागे अदृष्ट को पीछे छोड़
मांगलिक की प्रखर प्रत्याशा बन
आँखों में भविष्य को वशीभूत कर
हथेली पर प्रत्यय की नयी-नयी भाग्य रेखाएँ बनाती

वह आयेगी अकाल की अशांत स्थिति में
हाहाकार के उदास बंजर लाँघ
अन्न-छत्रों* में भर-भर मुट्ठी हँसी बाँटकर
मृगतृष्णाओं को वर्षा-जल से प्लावित करती

वह आयेगी सुबह की शास्त्रीय शुचि में
शांति का स्तोत्र उच्चारण करती
मंदिर के अँधेरे को संस्कारों से चमकाकर
यमदूतों के हाथों से मरणास्त्र छीनती

वह आयेगी कबूतर के मुलायम डैनों पर
युद्ध के आकाश में बमवर्षक विमानों को लाँघ
युद्ध रोकने का क़रारनामा लिये
निरस्त्रीकरण समझौते के सफल हस्ताक्षरों पर
हिंसा के बारूदी स्तम्भ पर
शांति का शीतल स्फुलिंग बन

वह आयेगी जेल की दीवारें तोड़
मनमौज़ी प्रशासन की निषेधाज्ञाएँ नकार
हाथों में विरोध की पताका लिये
वह बढ़ती चली जायेगी कर्फ़्यू के राजपथ पर
जुलूस के आगे नारे लगाती
झोले से उत्तेजक इश्तिहार बाँटती

शांति की पदयात्रा से क़दम मिलाती
वह आयेगी असहिष्णुता के नोआखाली में
साम्प्रदायिक दंगों के बीच रामधुन गाती
आतंकवादी बंदूक़ के आगे सीना ताने

*अन्न छत्र : जिस जगह अकाल पीड़ितोंऔर कंगालों को मुफ़्त भोजन दिया जाता है।

मेरी अगली कविता आयेगी
हाथों से नुकीले शब्द को समेट
निर्विरोध निःशंक सहज और स्वतःस्फूर्त
मात्राओं और छंदों की बंदिश तोड़
सादे काग़ज़ के स्वायत्त साम्राज्य में
जीने के अधिकारों को स्वतःसिद्ध करती

धर्मयुद्ध

मंदिर खड़ा रहता है
स्वर्ग को ताकता
पूजापाठ के सुरक्षित अँधेरे में
धर्मयाजक षड्यंत्र में व्यस्त हैं
मंत्रपाठ में वह आते है द्वेषभरे संदेश
रण सज्जा की तैयारी चल रही है
गर्भगृह में
ध्वज से गिर पड़ता है क्रोध और रोष
धूप उड़ा ले जाती है
संयम और सहिष्णुता
घण्टियाँ सूचित करती हैं
युद्धारम्भ का समय

पवित्र मण्डप पर बैठ
सम्प्रदाय के शीर्ष पुरोहितगण
व्यूह की कुटिल योजना बनाते हैं
होंठों पर मंत्रों का रण संगीत लिये
धर्म संस्थापना के लिए निकल पड़ते हैं
युयुत्सु व्रतधारी
शांतिवादी को विधर्मी घोषित कर देते हैं
धर्म के बड़े पुजारी

होंठों पर स्तोत्र और युद्धघोष
हाथों में त्रिशूल और बंदूक

तुलसी और बुलेट की माला पहन
अन्य धर्मियों को ढूँढ़ने निकल पड़ते हैं
धार्मिकता के अंधे योद्धा
बस्तियों में आग लगा
बच्चों का सीना चाकू से चीर
करते हैं महिलाओं से बलात्कार
प्रवचनों को प्रमाणित करने के लिए

धर्मयाजक की आँखों में घृणा
सीने में हिंसा होंठों पर स्पर्धा
उँगुली निर्देश देती है अराजकता को
अनुचर चले जाते हैं
द्वेष का भजन गाते हुए
विध्वंस की ओर

रात के अशुभ लग्नों में बैठ
करते हैं लाभ हानि का हिसाब
धर्म के भाड़े के दलाल
अपने-अपने अंधविश्वासों को अगोर
निश्चिंत सोये रहते हैं अफीम के नशे में
विश्वस्त यजमान और भक्त
आँखों पर धार्मिकता की काली पट्टी बाँध
ध्वंस का बीज बोते चले जाते हैं
स्वयं को धर्म के संस्थापक कहलाने वाले
मोटर-साइकिल के मृत्यु दूत

नींद नहीं आती

तारे अचेत हो गये आसमान में
बादलों की ढेर पर अन्यमनस्क बैठा है चाँद
नभमण्डल में समय की व्यापक स्तब्धता
स्मृति के आच्छादित पथ को आलोकित करती
दृष्टि से बाहर हो गया
आधी रात का उल्का
और आँखों में नींद नहीं

संगीत बिखर गये राह किनारे
पक्षी चले गये अपनी निस्तब्धता में
भिखारी ने उठा ली
अपनी चीथड़ों भरी ज़मीन
बच्चे फुर्र हो गये
लोरियों के जादू में
मंदिर की घंटियाँ हो गयीं
जड़ और निश्चल
सब ढह गये, जल गये
अँधेरे के झींगुरों के स्वर से
आँखें में नींद नहीं
नींद नहीं
नींद नहीं

ऊपर से टुप टाप गिर रहे हैं

कब के पुराने चेहरे
उमड़ रहा है
वचपन की स्नेहसिक्त नदी का तट

लौट आती हैं
भूले-विसरे गीतों की पंक्तियाँ
नयी स्वरलिपि से स्वयं को सजाये
निषिद्ध फाटक खुल जाते हैं
घुप्प अँधेरे के अंतःपुर के लिए
खुल जाते हैं
परी-कथाओं के समुद्र और संदूक़
नींद नहीं आती
नींद नहीं आती

अनकही बातें आती हैं मुखौटा पहन
सीने पर हथौड़ी मारता है
अतीत का विशालकाय राक्षस
शहर की अंधी गलियों में
अदृश्य हाथों का आतंक
सीने को चौंका जाता है
वंद मकान का अज्ञात

जुलूस बनी चली जाती हैं
अवूझ पहेलियाँ
भूल भ्रांति पश्चात्ताप
घेर लेते हैं अचेतनता को
शीतल पड़ जाता है
रक्त शिथिल हृदय का स्पंदन
नींद नहीं आती

नींद नहीं आती

मंत्र और सहस्रनाम वृथा हैं
औषधि निष्फल
ऋग्वेद की ऋचाओं
और रेवड़ में शमिल भेड़ों की गिनती
इधर-उधर छटपटाते अतीत और भविष्य
रात की आत्मा का आप्यायन
और असंतुष्ट भाग्य का धिक्कार
सभी आकर जम जाते हैं सीने में
पर आँखों में नींद नहीं

रहस्य और उम्र की रात
बढ़ती चली जाती है
साँसें अस्थिर तन-मन थके और उदास
स्मृतियों के प्रकोष्ठ लोकारण्य
बिना अधिकार के घुस आती हैं
अप्रिय घटनाएँ
ढूँढ़ते चेहरे और अनुभव अदृश्य हैं
किसी की अनुपस्थिति ले जाती है
स्वप्न आँखों से
ऊबती प्रतीक्षाओं के क्षणों में
नींद नहीं आती
नींद नहीं आती

महानदी

नील लोहित की तृषार्त उपत्यका से
वह आती है स्वतःस्फूर्त आशीर्वाद-सी
उपाख्यान और अतिवृत्त उसके सम्बल है
वह जन्म लेती है अनुश्रुतियों में
ऐतिह्य के अँधेरे से निकल चली जाती है
एक विस्मृति से एक अन्य किम्वदंती तक
आर्षवाणियों का अनुसरण करती

निष्पाप स्वाभाविकता और दूरदर्शी अनुभव की
अवांछित दूरी में खो जाते हैं
ओंकार और उत्तरायण
पीछे छूट जाते हैं
जंगल जनपद और मैदान
घंटियों के सम्मोहित क्षणों में
वह उतर जाती है
प्रतीक्षित समतलता की ओर
किस शापमुक्ति की तलाश में
कहाँ जाती है वह
किस समाप्ति की ओर
टेढ़ी-मेढ़ी आसक्ति लिये खो जाती है
किस आख्यान की किन सूक्तियों में

दुःस्वप्नों को पिघलाकर

ऋतुओं की उत्तेजना में झूला झूलती
दूर के एकाकी गीत में बहकर
झींगुरों की आवाज़ से टकराती
जनारण्य के कोलाहल से होती हुई
पत्थरों पर छलकती
रेत की सेज पर लोटती
तारों की रोशनी के संकुचित वृत्त में
लाँघ जाती है घाट और सीढ़ियाँ
क़िलों और मंदिरों को पीछे छोड़
पर्वत को घेर लेती है
चारण भूमि के शीतल आग्रह में
जनबस्ती की कालिख धो डालती हैं
स्वस्तिपाठ के शुद्ध पूत की सजहता से

फिर किसी विक्षिप्त क्षण में
उठा लेती है प्रलय का तरल अस्त्र
सब तहस-नहस कर डालती है
द्रवीभूत आक्रोश से
पूर्वजों की करुणा और कृतित्व
शहर और हरियाली, जीवन और जयगान
फिर समन्वित कर लेती है खुद को
पहचान लेती है पाप-पुण्य और प्रायश्चित्त
दुःख दैन्य दया और दायाधिकार
मृत्यु को लौटा देती है
अपने अंधे आश्रय
सब संतुलित हो जाता है दोबारा
धरित्री के हरित आग्रह में

विषाद और मृत्यु के बीच
प्रतिश्रुति और परिणाम के बीच
सम्भावना और सफलता के बीच
बहती है मिलती है खो जाती है
अविच्छिन्न रहती है
स्रोत जलराशि बाढ़ और प्रलय से परे
सीमित अनुभव लिये
एकाकार कर देती है सार्वजनिक अभिज्ञान से
निर्वैयक्तिक अवचेतन से आती
और फिर समा जाती है
जन-जन के सार्वभौम अंतःकरण में

हिरोशिमा

वह एक अद्भुत सबेरा था
कुछ भी पहले जैसा नहीं रहा
उस दिन के उगने के बाद

किस सम्भावना का विभाव आकाश में
बुद्धि का प्रचण्ड विस्फोट
या संस्कृति का ज्वलंत हस्ताक्षर
विद्वत्ता का प्रकाश प्रज्ञा की ऊष्मा
या प्रगति का उज्ज्वल विज्ञापन

अथवा एक नारकीय अदृष्ट
जो भू-भाग को तहस-नहस कर देता है
दूषित कर जाता है आनेवाले तमाम कल
पोंछ डालता है जन्म कुण्डलियों के शुभ-चिह्न
लोगों के भाग्य बच्चों की मुस्कानें
और समय की सारी उपलब्धियाँ

एक यांत्रिक ईश्वर आकर
मिटा डालता है सिद्धि और सामर्थ्य
ध्वंसावशेष के नीचे सौंप देता है
समृद्धि और सम्पन्नता
शापग्रस्त कर जाता है
भविष्य के उत्तराधिकारियों को

स्थापित कर जाता है
एक आत्माहीन पृथ्वी
जहाँ क्षमता सर्वशक्तिमान है
जहाँ इंसान है महज़
प्रयोगशाला की सांख्यिकी
और इतिहास की पाद टिप्पणी

इस एक ही दिनांत में
हो जाता है निश्चिह्न और निःशेष
केवल एक जनपद ही नहीं
समय के साथ-साथ बनी
सम्पूर्ण पृथ्वी और मानवता

आज की सभ्यता की आयु है
केवल चालीस वर्ष

कालाहाँडी

मानचित्र को दूर रख दो
अब वहाँ जाने के लिए
नहीं है ज़रूरत हेलिकॉप्टर की
जहाँ भी अकाल है
वहीं है कालाहाँडी

इंद्र ने मुँह फेर लिया वहाँ से
नहीं रहे पेड़ों में हरे पत्ते
सारा गाँव श्मशान बन गया
ज़मीन फटी नदी की रेत भी सूखी
हो गई असफल योजनाएँ
दरिद्रता की खिसकती चली गयी सीमारेखा

कालाहाँडी है जहाँ भी देखो
पंजर की हड्डियों में
धँसी आँखों के कोटरों में
देह ढाँपने के असमर्थ चीथड़ों में
बंधक पड़े काँस के बर्तनों में
फूस की झोंपड़ियों के उधड़े छप्परों में
मिट्टी के दोनों हाँड़ियों के सर्वस्व में

कालाहाँडी है हर जगह
मुफ़्त बँटते खाने की जगह कंकालों के मेले में
जहाँ बच्चे नीलाम होते हैं उन हाट-बाज़ारों में

वेश्यालय में बिकी
किशोरी की उसाँसों में
गाँव की माटी छोड़ जा रहे लोगों की
गुमशुम ख़ामोशियों में

और भी क़रीब से देखो कालाहाँडी को
झूठे वक्तव्यों, खोखली घाषणाओं में
अविश्वसनीय भाषणों के घड़ियाली आँसुओं में
कम्प्यूटरी काग़ज़ की अंतरिम घोषणाओं में
सम्मेलन के प्रकरणों, सस्ती सहानुभूतियों में
और योजनाओं के अर्थहीन अंधे वायदों में

कालाहाँडी हमारे एकदम क़रीब है--
आत्मा की सामयिक ताड़ना में
विवेक के अकस्मात् दंश में
अंतःकरण के पश्चात्ताप में
तृप्त नींद के दुःस्वप्न में
असहायता, भूख और बीमारी में
खून-ख़राबे की आसन्न सम्भावनाओं में

इक्कीसवीं सदी की समृद्ध सुरक्षा तक
हम कैसे पहुँच सकते हैं
कालाहाँडी को पीछे छोड़

गोपबंधु

चौराहे पर इस तरह शून्य को ताकते
और कब तक खड़े रहोगे
गोपबंधु*
धूप बारिश ठण्ड में
बाढ़ में, प्रलय में, अकाल में, दुर्दिन में
और कब तक बँधे खड़े रहोगे
लोहे के घेरे में
जयंती में, श्राद्धवार्षिकी में
देह पर जमती जा रही धूल में
मुरझाती फूलमालाओं में

अपने नये कारावास से
गोपबंधु
स्वदेश की चिन्ता करो फिर एक बार
जितने नये गड्ढे
बन चुके हैं स्वराज्य के पथ पर
उन्हें कौन भरेगा
अपना हाड़-मांस देकर
आज के सारे अन्याय अत्याचार
ख़ूब सच्चे ख़ूब भयावह हैं
कौन देखेगा उन्हें आँखों में आँसू भर
कौन करेगा विरोध उठाकर मुट्ठी

---

*गोपबंधु : स्वाधीनता संग्राम के प्रसिद्ध ओड़िया नेता ।

इसी तरह खड़े--खड़े
तुम थक जाओगे गोपबंधु
कोई नहीं लायेगा तुम्हारे लिए कुर्सी
सभी व्यस्त हैं यहाँ अपनी-अपनी कुर्सी के लिए

देखो, सड़कों पर लोग आ जा रहे हैं
तुम्हारी ओर देखे बिना
जेबों में छुट्टे पैसे सँभालते
गिरि-शिखर पर किसी का ध्यान नहीं
सबकी आँखें खुद पर टिकी हैं

सब कुछ तहस-नहस हो चुका है

गोपबंधु
तुम्हारा तमाम बकुल छुरीअना पेड़ों से घिरा आश्रम
तुम्हारा संयम निष्ठा शिक्षा-दीक्षा नीति-नियम
देश बहा जा रहा है प्रलय की ओर
सत्य हो चुका है क़ैद
अख़बारों के पीले पृष्ठों में
खो चुका है आदर्श
स्तूपाकार अपसंस्कृति तले
दफ़न हो चुकी है राष्ट्रीयता
जाति वर्ण सम्प्रदाय की संकीर्ण सीमाओं में

अकेले खड़े--खड़े
अब क्या करोगे गोपबंधु
उतर आओ चौराहे से अब
फिर से टूट जाओ
इस देश की माटी में समा जाये तुम्हारी देह
तुम्हारी पीठ पर से गुज़र जायें देशवासी
तुम्हारे आदर्श स्वराज की ओर

पक्षी

(एक)

कूड़े की ढेर पर खड़े हो
सूर्य को आकाश की गहराई से
नोच लाने का दिखावा करता है
और गर्व से सुबह होने की
घोषणा करता है
कपटी दम्भी कर्कश कण्ठ से

उसके बाद सारा दिन
छाया के पीछे-पीछे भागता है
सिर पर लाल मुकुट
स्पर्धाभरा मुँह ऊपर
इधर--उधर गर्व से
चहलक़दमी करता फिरता है
जबकि उसे नहीं देखता कोई

कोई नहीं देखता
कोई नहीं सुनता
सूर्य शेष करता है अपनी प्रदक्षिणा
अब वह ढेर की ओट में सो जाता है
संतुष्ट और संतृप्त
अहंकार को डैनों तले छुपाये रखता है
सूर्योदय तक

(दो)

सबको नीति-वाक्य सुनाया करता है
ज्ञान के प्रकाश की बात करता रहता है
पर खुद प्रकाश से टकराता
भाग जाता है अँधेरे के अशुभ कोने में

घने पेड़ के पत्तों की ओट में
चुपचाप बैठा रहता है सारा दिन
आँखें मूँद दार्शनिकता का छलावा करता है
अपने अंधेपन को छुपाने के लिए

कोटर में ख़ामोशी है
आसपास कोई नहीं
फिर भी ध्यान मग्न-सा
सामने ताकता रहता हे
विलक्षण दृष्टि सँजोकर
सबको आश्वासन देता रहता है
सिर हिलाकर बूढ़े-बुजुर्ग-सा

पेड़ से अंतिम प्रकाश बुझ जाने पर
कोटर से निकल आता है
पंजों से नोच लेता हे सारे अंधविश्वास
डाली से डाली उड़-उड़कर
पृथ्वी पर छींट देता है उसे
टुकड़े-टुकड़े अँधेरे के साथ

हाथ के क़रीब

किवाड़ खोलते ही धरती
समुद्र पर्वत अरण्य सरोवर
आँखें खोलते ही आकाश
चंद्र सूर्य ग्रह नक्षत्र
डग बढ़ाते ही स्वर्ग
अमृत अप्सरा और नंदन कानन

हाथ बढ़ाते ही सौहार्द्र
एक ही कटाक्ष से पूर्वराग
एक ही पत्र से प्रेम
स्पर्शमात्र से समर्पण
झपकी आते ही स्वप्न
एक ही मंत्र से मोक्ष
एक ही साँस से निर्वाण

हथेली पर भवितव्य
अँगूठे में निर्धारित
रंगभूमि की जीवन और मृत्यु
हाथ दिखाते ही रास्ता बंद
पलक झपकते ही इन्द्रजाल छिन्न
गोटें हाथ से फिसलते ही महाभारत
बटन दबाते ही विश्वयुद्ध
कागज़ पर निशान लगाते ही

गणतंत्र से अधिनायकतंत्र
देश का भाग्य नियंत्रित करता है
हाथ का प्रतीक
एक हस्ताक्षर मात्र से आत्मसमर्पण
अणुमात्र से सारा शहर तबाह

मुट्ठी में भाग्य और भवितव्य
आँखों में सीमांत पर आकाश
माँ के हाथ में बच्चे का हाथ
बंदूक़ पर हत्यारे की तर्जनी
स्वर्ग का तटस्थ चाँद
एक ही सम्बोधन से
आकाश से उतर आयेगा
बच्चे की कोमल हथेली पर
या फिर गिर पड़ेगा टुकड़े-टुकड़े हो
किसी आतंकवादी की एक ही गोली से

बालियापाल

किसका खेल है किसका काल
बालियापाल बालियापाल

बालियापाल है तीर्थस्थल
कुरुक्षेत्र नहीं धर्मक्षेत्र
यहाँ घुसने से पहले
पैरों से जूते उतार लो
दूर रख दो हाथों से तमाम हथियार
सिर झुकाते आओ
हाथ जोड़ते आओ
इस पवित्र प्रांगण में

बालियापाल है सत्य का परीक्षण स्थल
जनमत की घाटी न्याय की कसौटी
अहिंसा की प्रयोगशाला
बालियापाल है अंतिम संघर्ष
जनबल और क्षमता का
वैधता और निरंकुशता का
बर्बरता और मानवीयता का

बालियापाल नहीं जानता
अमेरिका कहाँ और रूस है क्या
हिरोशिमा कहाँ है और पोखरन है क्या

बालियापाल बस इतना जातना है
भूख है क्या और कितना होता है मुट्ठी भर अनाज

यहाँ का किसान सिर्फ़ पहचानता है
बादल को, बारिश को, माटी की गंध को
पेड़ को फ़सल को अकाल को टिड्डियों को

बालियापाल है भविष्यकाल
किसान यहाँ है सार्वभौम अधीश्वर
यहाँ अस्त्र नहीं, शस्त्र नहीं
सैन्य नहीं, शीत-युद्ध नहीं
यहाँ है सिर्फ़ मिट्टी पानी और पेड़-पौधे
शस्यश्यामला धरती
और अदम्य मनुष्य की सत्ता

यहाँ धान के पौधे उखाड़कर
तुम बंदूकें रोप सकते हो
खाद के बदले बारूद छींट सकते हो
पानी के बदले खून सींच सकते हो
पर बालियापाल की मिट्टी से आखिर
धान ही उपजेगा
प्रक्षेपास्त्र नहीं

**

आह्निक के चर्चित कवि *श्री जगन्नाथ प्रसाद दास* का जन्म (1936) ओड़िसा के पुरी नगर में हुआ। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से राजनीतिशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के बाद आप भारतीय प्रशासनिक सेवा में कार्यरत रहे किन्तु लेखन तथा अनुसंधान में अपने को पूरी तरह समर्पित कर देने के लिए आपने पूर्व-सेवानिवृत्ति ले ली।

श्री दास के पहले कविता-संग्रह *प्रथम पुरुष* (1971) को व्यापक प्रशंसा मिली। इसका हिन्दी तथा अंग्रेज़ी में अनुवाद भी हुआ। अन्य दो और कविता-संग्रह, *अन्य सबु मृत्यु* तथा *जे जाहार निर्जनता* भी पाठकों द्वारा भरपूर प्रशंसित हुए। देश के विभिन्न भागों में मंचित आपके कई नाटक आकाशवाणी और दूरदर्शन पर भी प्रसारित हो चुके हैं। आपके अंग्रेज़ी कविता संकलनों में *फ़र्स्ट पर्सन, लव इज़ ए सीज़न, टाइमस्केप्स, बिफ़ोर द सनसेट* और *द अंडरडॉग* सम्मिलित हैं।

प्रस्तुत संग्रह ***आह्निक*** में तीस कविताएँ हैं। ये कविताएँ जीवन के सूक्ष्म निरीक्षण और बहुस्तरीय जटिलताओं की प्रतिक्रियाओं से उपजी हैं, जो अपने सहज न्यास में परिचित परिवेश और आम लोगों के बीच से गुज़रती कवि की अनुभूति, उसके बिम्ब और उसकी भाषा में अनुगूँजें पैदा करती हैं। ये आधुनिक मन की उस अंतश्चेतना को झकझोरती हैं–जो अकेलेपन, अस्तित्व के विखण्डन और अनिश्चितता भरे संत्रास से जूझ रही हैं। मानवीय अस्तित्व पर संकट के प्रभावी अंकन, बिम्ब और भाषा की ताज़गी और तेजस्विता, गहन प्रश्नाकुलता तथा बौद्धिक ओज के लिए यह कृति ओड़िया में लिखित भारतीय साहित्य को विशिष्ट योगदान मानी गयी है। इसे वर्ष 1992 का साहित्य अकादेमी पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

इस संकलन की कविताओं का मूल ओड़िया सें समर्थ हिन्दी अनुवाद *डा. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र* ने किया है।

आवरण : रणवीर सिंह बिष्ट

ISBN 81-7201-530-5

चालीस रुपये